जैन आगम साहित्य में श्रावस्ती

जैन आगमिक साहित्य में श्रावस्ती का उल्लेख आर्यक्षेत्र के जनपद की राजधानी के रूप में किया गया है। भगवतीसूत्र के अनुसार यह नगरी कृतांगला नामक नगर के निकट स्थित थी। इसके समीप अचिरावती नदी बहती थी । श्रावस्ती नगरी के तिन्दुक उद्यान और कौष्ठक वन का उल्लेख हमें जैनागमों में बहुलता से उपलब्ध होता है। स्थानांगसूत्र में इसे भारतवर्ष की दस प्रमुख राजधानियों यथा साकेत श्रावस्ती, हस्तिनापुर, काम्पिल्य, मिथिला, कौशाम्बी, वाराणसी और राजगृह में से एक माना गया है।

इस वर्णन से ऐसा लगता है कि स्थानांग के रचना काल तक जैन परम्परा मुख्य रूप से उत्तर भारत के नगरों से ही परिचित थी। श्रावस्ती का दूसरा नाम कुणाला भी था। जैन साहित्य में श्रावस्ती की दूरी साकेत (अयोध्या) से सात योजन (लगभग ९० कि.मी.) बतायी गई है। वर्तमान में श्रावस्ती की पहचान बहराइच जिले के सहेट-महेट ग्राम से की जाती है। आधुनिक उल्लेखों के आधार पर यह बात सत्य भी लगती है, क्योंकि साकेत से सहेट-महेट की दूरी लगभग उतनी ही है। पुन: सहेट-महेट का राप्ती नदी के किनारे स्थित होना भी आगमिक तथ्यों की पुष्टि करता है। राप्ती अचिरावती का ही संक्षिप्त और अपभ्रंश रूप है। श्रावस्ती के उत्तर पूर्व में कैकेय जनपद की उपस्थिति मानी गयी है और कैकेय जनपद की राजधानी सेयाविया (श्वेताम्बिका) बतलायी गयी है। कैकेय के अर्धभाग को ही आर्य क्षेत्र माना जाता था इसका तात्पर्य यह है कि उस काल में इसके आगे जंगली जातियां निवास करती रही होंगी ।

श्रावस्ती को चक्रवर्ती मघवा, राजा जितशत्रु, पसेनिय (प्रसेनजित) और रूप्पि की राजधानी बताया गया है। इसके अतिरिक्त इस नगर को तीर्थंकर सम्भवनाथ का जन्मस्थान और प्रथम पारणे का स्थान भी माना जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से हमें जैन आगम साहित्य में जो प्रमाण मिलते हैं, उसके आधार पर यह नगर राजा प्रसेनजित की राजधानी थी। राजप्रश्नीय के अनुसार प्रसेनजित को पार्श्वापत्यीय-श्रमण केशी ने निर्ग्रन्थ परम्परा का अनुयायी बनाया था। राजप्रश्नीय में प्रसेनजित को आत्मा के अस्तित्व एवं पुनर्जन्म के सम्बन्ध में अनेक शंकाये थीं, जिन्हें आर्य केशी ने समाप्त किया था। ज्ञाताधर्मकथा और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निरयावलिका के उल्लेख के अनुसार पार्श्व श्रावस्ती गये थे और वहां पर उन्होंने काली, पद्मावती, शिवा, वसुपुत्ता आदि अनेक स्त्रियों को दीक्षित किया था। श्रावस्ती में पार्श्वापत्यों का प्रभाव था इस तथ्य की पुष्टि अनेक आगमिक उल्लेखों से होती है। जैन आगम साहित्य में जो उल्लेख पाये जाते हैं उनसे ऐसा लगता है कि श्रावस्ती पर निर्ग्रन्थों के अतिरिक्त आजीवकों, बौद्धों और हिन्दू परिव्राजकों का भी पर्याप्त प्रभाव था। बौद्ध साहित्य से यह स्पष्टत: ज्ञात होता है कि बुद्ध इस नगर में अनेक बार आये थे और उन्होंने यहाँ अपने प्रतिहार्यों का प्रदर्शन भी किया था। इससे ऐसा लगता है कि उस युग का श्रावस्ती का जनमानस प्रबुद्ध और उदार था और वह विभिन्न धर्म सम्प्रदाय के लोगों को अपने सिद्धान्तों को प्रस्तुत करने का अवसर देता था। जैन परम्परा के लिए तो श्रावस्ती अनेक दृष्टियों से एक महत्त्वपूर्ण नगर सिद्ध होता है।

भगवतीसूत्र में प्राप्त सूचना के अनुसार जैनों का प्रथम संघ भेद भी श्रावस्ती में ही हुआ था। महावीर के जामातृ जामालि ने यहीं पर "क्रियमाण अकृत" का सिद्धान्त स्थापित किया था और महावीर के संघ से अपने ५०० शिष्यों के साथ अलग हुए थे। जामालि की मान्यता यह थी कि जो कार्य पूर्णतया समाप्त नहीं हुआ है, उसे कृत नहीं कहा जा सकता। इसके विपरीत महावीर की मान्यता यह थी कि जो कार्य हो रहा है, उसे सापेक्षिक रूप से कृत कहा जा सकता है, क्योंकि उस कार्य का कुछ अंश तो हो ही चुका है। इस प्रकार महावीर की संघ व्यवस्था में प्रथम विद्रोह का सूत्रपात श्रावस्ती नगर में ही हुआ था।

पुन: महावीर और मंखलिपुत्रगोशालक के मध्य विवाद की चरम परिणति भी श्रावस्ती में हुई थी। भगवतीसूत्र के १५वें शतक के अनुसार आजीवक परम्परा के मंखालिपुत्रगोशालक ने अपना २४वां चातुर्मास श्रावस्ती नगरी के हालाहला नामक कुंभकारी की आपण (दुकान) में किया था। उस समय भगवान महावीर श्रावस्ती नगरी के कोष्ठक चैत्य में चातुर्मासार्थ विराजित थे। भगवतीसूत्र में उपलब्ध विवरण के अनुसार प्रथम तो गोशालक ने भिक्षार्थ गये महावीर के श्रमणों के समक्ष श्रावस्ती की सड़कों पर ही महावीर की आलोचना की। पुन: कोष्ठक वन में आकर महावीर से विवाद किया तथा उन पर तेजोलेश्या फेंकी। उस तेजोलेश्या के कारण महावीर के दो शिष्य सर्वानुभूति और सुनक्षत्र मरण को प्राप्त होते हैं और स्वयं महावीर भी अस्वस्थ हो जाते हैं। भगवतीसूत्र के १५वें शतक में इस सम्पूर्ण घटनाक्रम का विस्तारपूर्वक उल्लेख है। ऐतिहासिक दृष्टि से हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि महावीर और गोशालक के मध्य विवाद की चरम परिणति भी श्रावस्ती नगर में हुई थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किन्तु जहां श्रावस्ती में उस युग के विभिन्न धर्म सम्प्रदायों के बीच विरोध और संघर्ष के स्वर मुखर हुए थे, वहीं महावीर और पार्श्व की परम्पराओं के सम्मिलन का स्थल भी यही नगर था। श्रावस्ती नगर के तिन्दुक उद्यान में पार्श्वापत्य परम्परा के आर्य केशी विराजित थे, वहीं इसी नगर के कोष्ठक उद्यान में महावीर के प्रधान शिष्य इन्द्रभूति गौतम विराजित थे। दोनों आचार्यों के शिष्य नगर में जब एक दूसरे से मिलते थे तो उनमें यह चर्चा होती थी कि एक ही लक्ष्य के लिए प्रवृत्त इन दोनों परम्पराओं में यह मतभेद क्यों है? केशी और गौतम अपने शिष्यों की इन शंकाओं के समाधान के लिए तथा महावीर और पार्श्व की परम्पराओं के बीच कोई समन्वय-सेतु बनाने के लिए परस्पर मिलने का निर्णय करते हैं और गौतम ज्येष्ठ कुल का विचार करके स्वयं केशी श्रमण के पास मिलने हेतु जाते हैं। केशी श्रमण गौतम को सत्कारपूर्वक आसन प्रदान करते हैं। श्रावस्ती के अनेक व्यक्ति भी दोनों आचार्यों की इस विचार चर्चा को सुनने हेतु एकत्र हो जाते हैं। दोनों आचार सम्बन्धी मतभेदों तथा आध्यात्मिक साधना के विभिन्न समस्याओं पर खुलकर विचार-विमर्श करते हैं। दोनों का श्रावस्ती में यह सौहार्दपूर्ण मिलन ही पार्श्व और महावीर की परम्पराओं के बीच समन्वय सेतु बना।

इसी प्रकार श्रावस्ती स्कन्दक नामक परिव्राजक और भगवान महावीर के पारस्परिक मिलन का और लोक, जीव, सिद्धि आदि सम्बन्धी अनेक दार्शनिक प्रश्नों पर चर्चा का स्थल भी रहा है। भगवतीसूत्र में प्राप्त उल्लेख के अनुसार श्रावस्ती नगर में आचार्य गर्दभिल्ल के शिष्य कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक परिव्राजक निवास करते थे। उसी नगर में निर्ग्रन्थ वैशालिक अर्थात् भगवान महावीर का श्रावक पिंगल भी निवास करता था। पिंगल और स्कन्दक के बीच लोक, जीव और सिद्धि की सान्तता और अनन्तता पर चर्चा होती है। स्कन्दक इस चर्चा के समाधान के लिए स्वयं श्रावस्ती के निकट ही स्थित कृतमंगलानगर, जहाँ पर भगवान महावीर और गौतम विराजित थे, वहाँ जाता है। गौतम महावीर के निर्देश पर स्कन्दक परिव्राजक का समादर पूर्वक स्वागत करते हैं, उसे महावीर के समीप ले जाते हैं और दोनों में फिर इन्हीं प्रश्नों को लेकर विस्तार से चर्चा होती है। अन्त में स्कन्दक महावीर के विचारों के प्रति अपनी आस्था प्रकट करते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जहाँ एक ओर श्रावस्ती महावीर की अपनी परम्परा में ही उत्पन्न विद्रोह का नगर है वहीं दूसरी ओर महावीर की परम्परा का अन्य परम्पराओं के साथ कितना सौहार्दपूर्ण व्यवहार था, इसका भी साक्षी स्थल है। वस्तुतः ऐसा लगता है कि श्रावस्ती के परिवेश में विचार स्वातन्त्र्य और पारस्परिक सौहार्द के तत्त्व उपस्थित थे। इस नगर के नागरिकों की यह उदारता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थी, कि वे विभिन्न विचारधाराओं के प्रवर्तकों को समान रूप से समादर देते थे। मात्र यही नहीं, उनमें होने वाली विचार चर्चाओं में भी सहभागी होते थे। श्रावस्ती को हम विभिन्न धर्म परम्पराओं की समन्वयस्थली कह सकते हैं।

आगमिक सूचनाओं के अनुसार श्रावस्ती नगर के बाहर बहने वाली उस अचिरावती नदी में जल अत्यन्त कम होता था और जैन साधु इस नदी को पार करके भिक्षा के लिए आ जा सकते थे। यद्यपि वर्षाकाल में इस नदी में भयंकर बाढ़ भी आती थी ।

इस प्रकार जैन धर्म की अनेक महत्त्वपूर्ण घटनायें श्रावस्ती के साथ जुड़ी हुई हैं। फिर भी यदि तुलनात्मक दृष्टि से विचार करें तो बौद्ध साहित्य के अनुशीलन से ऐसा लगता है कि यहाँ पर बौद्ध धर्म का प्रभाव अधिक था और स्वयं बुद्ध का इस नगर के प्रति विशिष्ट आकर्षण था। यह ठीक वैसा ही था जैसा कि महावीर का राजगृही के प्रति। यही कारण है कि बुद्ध ने यहाँ अनेक चातुर्मास किये और प्रायः इसी के समीपवर्ती क्षेत्र में विचरण करते थे। जबकि महावीर ने सर्वाधिक चातुर्मास राजगृह और उसके समीपवर्ती उपनगर नालन्दा में किये। फिर भी जैन आगम साहित्य के अनुशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि श्रावस्ती का जैन परम्परा के साथ भी निकट सम्बन्ध रहा है। उसे तीसरे तीर्थंकर सम्भवनाथ के चार कल्याणकों की पावन भूमि माना जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org